क्या पूर्व निर्धारित है पृथ्वी की मृत्यु ?

भारतीय उप-महाद्वीप की ज्ञान-परंपराओं में किसी भी जीवधारी की जीवन-मृत्यु पूर्व निर्धारित मानी जाती हैं, लेकिन अब आधुनिक विज्ञान भी इसे मानने लगा है। ताजा शोधों ने उजागर किया है कि प्रकृति में बेजा मानवीय हस्तक्षेप के चलते यह पूर्व-निर्धारित मृत्यु करीब, और करीब आने लगी है।

हाल ही में एक रिपोर्ट हमें यह निष्कर्ष निकालने के लिए मजबूर करती है कि हम "जीव विलुप्तीकरण युग" में रह रहे हैं। जी हाँ! वैश्वीकरण-युग, सूचना-युग और 'आर्टिफीसियल इंटेलिजेंस'-युग से होते हुए हम जीव-विलुप्तीकरण-युग में प्रवेश कर गए है ! आने वाले वर्षों में पृथ्वी पर छठे जीव-विलुप्तीकरण के बारे में बहुत कोलाहल है। 42 देशों में 200 वैज्ञानिकों के एक शोध से पता चला है कि पृथ्वी पर सभी पौधों में से 2/5 के विलुप्त होने का खतरा है।

पृथ्वी पर करोड़ों वर्षों के इतिहास में अब तक जीव-विलुप्तीकरण की पांच विराट घटनाएं हो चुकी हैं, और अब दुनिया जीव विनाश के छटे पड़ाव पर है। इसे 'होलोसीन' विलुप्तीकरण और इस कालखंड को 'होलोसीन-युग' भी कहते हैं। जीवन के उद्गम से लेकर अब तक धरती पर जितनी जीव-प्रजातियों का विकास हुआ है, उनमें से 99 प्रतिशत विलुप्त हो चुकी हैं। अब भी धरती पर इतनी प्रजातियां हैं कि उनका सम्पूर्ण विवरण वैज्ञानिकों के पास भी नहीं है। वर्तमान काल में उनके विलुप्त होने की दर सामान्य दर से 100 से 1000 गुना अधिक है। अब तक जीव-विलुप्तीकरण की जितनी घटनाएं हुईं हैं, वे सब नैसर्गिक थीं। मगर छठी घटना की पृष्ठभूमि मानव द्वारा रची जा रही है। इसीलिए इस घटना को 'अन्थ्रोपोसीन' विलुप्तीकरण और इस युग को 'अन्थ्रोपोसीन-युग' भी कहते हैं।

जीवों के विलुप्त होने की नैसर्गिक प्रक्रिया को 'पृष्ठभूमि विलुप्तीकरण' कहते हैं। इससे धरती पर जीवन का विघटन नहीं, कालांतर में जीवन की अभिवृद्धि ही हुई है, परन्तु छठे विराट विलुप्तीकरण के केंद्र में प्रकृति के विनाश के लिए उत्तरदायी मानव गतिविधियां हैं। इसलिए जीवों का यह सामूहिक विनाश कितना प्रचंड होगा, इसकी कल्पना ही की जा सकती है!

हर जीव की मृत्यु अपरिहार्य है। प्रत्येक जीव के अस्तित्त्व में आते ही उसकी मौत निश्चित हो जाती है। एक कोशिका, जिससे जीव का गठन होता है, 'प्रकाश संश्लेषण' के माध्यम से सौर-ऊर्जा द्वारा संचालित होती है। पौधों, शैवाल और नील-हरित जीवाणुओं में 'प्रकाश संश्लेषण' सीधे होता है, लेकिन जंतुओं की कोशिकाएं वही ऊर्जा पौधों से लेती हैं। अपनी संरचना और गठन में एक कोशिका इतनी ही जटिल होती है जितना एक पूरा जीव, जितना सारा जैवमंडल और यहाँ तक कि जितना सारा ब्रह्मांड।

एक जीवित कोशिका से जुड़ी अद्भुत घटनाओं में से एक है-'एपोप्टोसिस' अर्थात एक कोशिका में अंतर्निहित 'मृत्यु कार्यक्रम।' इसी 'मृत्यु कार्यक्रम' के अनुसार ही एक कोशिका अपनी मृत्यु प्राप्त करती है। अपने जन्म से ही मौत का 'कार्यक्रम' साथ लाई कोशिका को मौत का अनिवार्य रूप से पालन करना होता है। इस प्रकार 'एपोप्टोसिस' या किसी 'जीव की मृत्यु' एक सार्वभौमिक नियम है। एक जीव वास्तव में एक कोशिका का ही विस्तार है। एक जीव की कोशिकाएं मरती हैं, तो एक जीव मरता है। देखा जाए तो हमारे जिन्दा ग्रह का जीवमंडल (बायोस्फियर) भी एक कोशिका का ही विस्तार है। तब क्या जिन्दा ग्रह पृथ्वी की मौत भी निर्धारित है? क्या पृथ्वी में भी 'मृत्यु कार्यक्रम' अन्तर्निहित है और उसकी मृत्यु भी अवश्यम्भावी है, यह एक पहेली-सा प्रश्न मन को झकझोर देने वाला है।

यह किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं, बल्कि प्रत्येक जीव की प्रत्येक कोशिका में समाहित एक सनातन सत्य के आधार पर है। पर्यावरण, पारिस्थितिकी और ब्रह्मांडीय सिद्धांतों पर आधारित एक और बौद्धिक परिकल्पना है जिस पर कैंब्रिज स्कॉलर्स द्वारा प्रकाशित 'फर्टीलीज़िंग द यूनिवर्स' (ब्रह्माण्ड का निषेचन) पुस्तक में प्रकाश डाला गया है। इसके अनुसार पृथ्वी की मौत निर्धारित-सी लगती है। ब्रह्मांडीय नियमों के अनुसार प्रत्येक तत्त्व और ऊर्जा अन्ततोगत्त्वा अपने मूल घर में लौटती है। जीव की मृत्यु इसी सिद्धांत का पालन करती है, जैसे जीव के पोषक तत्त्व 'थल मंडल' पर लौटते हैं, उनका जल, जलमंडल में और गैसें वायुमंडल में लौटती हैं। क्योंकि ये सारे तत्त्व पृथ्वी के थे, अत: उनका पृथ्वी पर पुनर्चक्रण होता है। जीवों में ऊर्जा पृथ्वी के बाहर सूर्य से (कुछ अंश अन्य नक्षत्रों से) निर्वात (स्पेस) से होकर आती है और ऊष्मा के रूप में पुन: स्पेस में लौट जाती है।

पृथ्वी के 'एपोप्टोसिस' का मूल सार्वभौमिक सिद्धांत, वास्तव में 'सार्वभौमिक मुक्ति' का सिद्धांत है। हर चीज एक निश्चित समय पर स्वयं को मुक्त करती है। ऊर्जा भी सदैव के लिए बंधन में नहीं रह सकती; समय की निश्चित अवधि के बाद इसे स्वयं को मुक्त करना होता है। प्रत्येक जीव वास्तव में ऊर्जा का ही एक खाका (फ्रेमवर्क) है। हर फ्रेमवर्क में ऊर्जा अलग स्वभाव से कार्य करती है और समय के निश्चित बिंदु पर उस फ्रेमवर्क से स्वयं को मुक्त कर लेती है। 'ऊर्जा के मुक्तिकरण' की यही प्रक्रिया 'जीव की मौत' है। प्रत्येक प्रजाति के लिए ऊर्जा-मुक्ति की अवधि भिन्न है, जिसे 'प्रजाति की आयु' कहते हैं। जिन्दा ग्रह से समस्त जीवों की यह ऊर्जा कब मुक्त होगी, अर्थात पृथ्वी की आयु कितनी है, इसका अनुमान लगा पाना कठिन है।

'एपोप्टोसिस' के सार्वभौमिक नियम की प्रतिपूर्ति जीवन के एक और सार्वभौमिक सिद्धांत से होती है।

यह है – 'जीवन की अमरता' का सिद्धांत। प्रत्येक जीव अपनी मृत्यु से पहले अपने प्रारूप पैदा कर अमर हो जाने के गुणों से संपन्न होता है और इस तरह, 'एपोप्टोसिस' की प्रक्रिया पर विजय पा लेता है। यदि पृथ्वी को अपरिहार्य रूप से 'एपोप्टोसिस' के रास्ते गुजरना है, तो उसे भी अपने जैवमंडल का प्रारूप पैदा करना होगा।

धरती के बीज अन्य ग्रह पर प्रस्फुटित होने और शनै: – शनै: एक जैवमंडल विकसित करने में सक्षम हैं। धरती की इस अमरता को स्थापित करने में धरती के सर्वाधिक गतिशील प्राणी मानव का योगदान अपरिहार्य होगा। कुछ कारक हैं जो कोशिका के 'एपोप्टोसिस' को त्वरित करते हैं। पृथ्वी के मामले में,

ऐसा लगता है कि मानव प्रजाति 'एपोप्टोसिस' की घटना को प्रेरित और तेज कर रही है। सार्वभौमिक गर्माहट हो, ऋतु-चक्र में गड़बड़ हो, जलवायु परिवर्तन हो या प्रजातियों के तेजी से विलुप्त होने की घटना हो, निष्कर्ष यह निकल कर आता है कि पृथ्वी पर जीवन-प्रणालियों की दुर्दशा मानवजनित है।

मानव का अवांछनीय हस्तक्षेप पूर्णतया बंद हो तो हमारे शनैः – शनैः दम तोड़ते 'जिन्दा ग्रह' को बड़ी राहत मिल सकती है। इसका एक जीता-जागता उदाहरण लॉकडाउन के दिनों में देखने को मिला, जब प्रकृति और हरी-भरी हो गई थी, नदियों का जल पीने योग्य हो गया था, वन्य-जीव राहत की साँस ले रहे थे और पर्यावरण की दशा में आशातीत सुधार हो गया था। हमारी समकालीन दुनिया के सामने सबसे महत्वपूर्ण सवाल यह है : क्या मानव प्रजाति को 'पृथ्वी की मौत' के लिए जिम्मेदार ठहराया जाएगा ? (सप्रेस)

साभार- https://www.spsmedia.in/ से